उत्तराखण्ड में जल संसाधनों के वितरण एवं जल आपूर्ति की किल्लत एवं निदान

डा. पी.बी. सक्सेना,
चेयरमैन, हार्ड, देहरादून
डा. प्रीति सक्सेना,
रिसर्च स्कूलर एवं वाइस प्रिंसीपल, राजा राममोहन रॉय कालेज, देहरादून
डा. शैल दरबारी
रिसर्च सकोलर, डी.लिट, मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ

भौगोलिक परिचय

उत्तराखण्ड 28 52 उत्तरी अक्षांश से 31 23 उत्तरी अक्षांश तथा 77 57 से 80 05 पूर्वी देशान्तर में स्थित है। इसका विस्तार दक्षिण में तराई भावर क्षेत्र से उत्तर में हिमाद्री की इन्डो-तिब्बत की सीमा का निर्माण करती है। पश्चिम में यमुना नदी एवं इसकी सहायक नदी टोंस हिमाचल प्रदेश से सीमा निर्धारित करती है पूर्व दिशा में काली-शारदा इसकी सीमा निर्धारित करती है। इस क्षेत्र की गढ़कूम के नाम से जाना जाता है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित 13 जनपद सम्मिलित हैं- देहरादून, हरिद्वार, पौडी, उत्तर काशी, चमोली, रूद्र प्रयाग, टिहरी, नैनीताल, अल्मोड़ा, पिथौरागढ़ तथा चम्पावत, ऊधम सिंह नगर, बागेश्वर आदि हैं, जिसके अन्तर्गत 39 तहसील, 92 ब्लाक, 633 न्याय पंचायत एवं 6237 ग्राम सभाएं सम्मिलित हैं।

इस पूर्ण क्षेत्र का क्षेत्रफल 53,000 वर्ग किमी. है जो उत्तर प्रदेश का 17.36 प्रतिशत है। अधिकतम पूर्व से पश्चिम का विस्तार 290 किमी. उत्तर से दक्षिण हैं। इस क्षेत्र में जनसंख्या का घनत्व 125 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी. है। इस क्षेत्र में 5,15,000 पुरूष तथा 485000 स्त्रियां हैं जो कि उत्तर प्रदेश की जनसंख्या का 4.34 प्रतिशत भाग है। जनसंख्या की वृद्धि दर 22.25 लाख 1991, अनुसूचित जाति 14.25 लाख एवं अनुसूचित जनजाति 2.85 लाख है। जलवायु के दृष्टिकोण से इस क्षेत्र में वर्षा 200 सेमी. से 260 सेमी. होती है तथा औसत तापमान 25 से.ग्रे. अंकित किया गया है। 1991 की जनसंख्या के अनुसार यहां पर 65 प्रतिशत साक्षरता तथा 55,000 है. भूमि पर वन पाये जाते हैं। 63 प्रतिशत भूमि में कृषि 12.8 प्रतिशत अन्य उपयोगी भूमि, 2.5 कृषि अयोग्य, 11.5 प्रतिशत, 4.25 प्रतिशत शुद्ध सिंचित भूमि है। यहां पर 2,500 डाकघर, 20000 टेलीफोन, 10000 शिक्षा विद्यालय अंकित किये गये हैं।

शिंडिनी बुराई 1907 इस संपूर्ण क्षेत्र को कुमायूं हिमालय के नाम से सम्बोधित किया था, तत्पश्चात इसे डा. नित्यानन्द जी ने इसे गढकूम के नाम से सम्बोधित किया और

अब यह उत्तराखण्ड के नाम से विख्यात है, जिसे उत्तर प्रदेश हिमालय के नाम से जाना जाता था।

भौगोलिक संरचना

हिमालयन पर्वत मालाओं की उत्पत्ति आज से लगभग 40 मिलियन वर्ष पूर्व हुई थी। भौगर्भिक युग के अनेक चरणों में विविध प्रकार की भू-विवर्तनीक प्रक्रियाओं एवं ज्वालामुखी उद्‌भेदनों के क्रियान्वयन होते रहने के परिणाम स्वरूप इस क्षेत्र की भौगर्भिक बनावट व संरचना अधिक जटिल होती गई। इस क्षेत्र में आर्केयन युग की जटिल चट्‌टानों से लेकर अभिनूतन युग की कांप तक लगभग सभी युगों की चट्‌टानों के अवशेष पाये जाते हैं।

हिमालय की संरचना पर प्रभाव थिस सागर की भूसन्नति का पड़ता है। अतः इसे चार समान श्रेणियों में विभाजित किया जाता है।

1- शिवालिक श्रेणी
2- लघु हिमालयन श्रेणी
3- मध्य हिमालय श्रेणी
4- टेथिस सागर श्रेणी

शिवालिक श्रेणी

ये श्रेणी उत्तर प्रदेश हिमालय के दक्षिण भूभाग में स्थित है। जिसे कि पश्चिम में यमुना तथा पूर्व में काली नदी द्वारा काटकर इसकी सीमा निर्धारित करती है। ये श्रेणी मुख्य रूप से टर्शरी बालू पत्थर तथा पूर्व में काली नदी द्वारा काट कर इसकी सीमा निधारित करती है। ये श्रेणी मुख्य रूप से टर्शरी बालू, पत्थर एवं शैल की चट्‌टानों से निर्मित है। ये श्रेणी अत्यन्त नवीन है। इसकी मोटाई पश्चिम में अधिकतम --- मी. तथा पूर्व में --- मी. है। शिवालिक की चट्‌टानों में जीवाशेष की प्रधानता है। इनमें हाथी, रेंगने वाले जीव तथा मछली आदि के जीवाशेष पाये जाते हैं। इन जीवाशेषों के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि वे सब जीन-जन्तु आधुनिक जीव-जन्तुओं से ठीक पूर्वकालिक प्राचीन थे। शिवालिक युग की चट्‌टानों के ठीक उलटे भाग में निम्न हिमालय की चट्‌टानें पायी जाती हैं जो अपेक्षाकृत प्राचीन हैं तथा दक्षिण की ओर व्युतिक्रम भ्रंशन जिसे मुख्य भ्रंश रेखा के नाम से जाना जाता है द्वारा नवीन युग की चट्‌टानों के ऊपर प्रद्विप्त हो गयी हैं। इस प्रकार शिवालिक क्रम की चट्‌टानें इस मुख्य भ्रंशन रेखा को कहीं भी पार नहीं करती, और न ही इस क्रम की चट्‌टानों का कोई अंग उत्तर हिमालय क्षेत्र में पाया जाता है। प्रायः पिछले दशक से शिवालिक पर्वत क्षेत्र में घसन तथा तट के उठाव की कम क्रियाएं देखने को मिली हैं। मैं चीला के समीप ताल नदी के तल में उठाव हुआ तथा समीप की श्रेणी में करीब घंसन की क्रिया क्रियान्वित हो रही है। इसके अतिरिक्त राजपुर में जो शहनशाही आश्रम के पास है। जहां गुजरता है राजपुर ओक ग्रुप सड़क का अचा!नक साव 1992 में हुआ जिससे सड़क

विदशा हो गयी और जल विभाजक कटाव तीव्रता से होने लगा। इसके कारण सड़क की चौड़ाई अब केवल 6 फुट ही शेष बची है। इस प्रकार की क्रियाएं शिवालिक श्रेणी में बड़ी तीव्र मात्रा में हो रही है, जिसमें प्रमुख कारण मंसूरी की क्रोल भ्रंश में उत्खनन कार्य तथा में अतिरिक्त कटाव तथा अतिरेक चट्टान भी है।

लघु हिमालय श्रेणी

लघु हिमालय की पर्वत श्रेणी का विस्तार मुख्य केन्द्रीय भ्रंसन --- रेखा से मुख्य भ्रंसन रेखा ---- तक है। इस क्षेत्र की चट्टानें खनिजों से मिश्रित हैं। ये चट्टानें पूर्व की अपेक्षा पश्चिम की ओर अधिक नवीन युग की हैं। समुद्री अवसादों से निर्मित प्राचीन चट्टानें भ्रंसन के माध्यम से नवीन ऊपरी टरशरी चट्टानें जिन्हें शिवालिक क्रम की चट्टानें भी कहा जाता है के ऊपर प्रदिप्त हो गयी हैं। इसमें पूर्व के विभ्रंसन युग की खेदार पायी जाती है। इस क्षेत्र की संरचना बड़ी ही जटिल है। कई स्थानों पर नये शीट देखने को मिलती है। जहां प्राचीन चट्टानें नवीन चट्टानों पर अपेदित हैं। इस क्षेत्र की चट्टानें ग्रेनाइट तथा अन्य जीवार्शेश युक्त अवसाद से निर्मित खेदार चट्टानों से युक्त हैं।

उत्तरांचल प्रदेश के लघु हिमालय की अपनी अलग विशेषताएं हैं। देहरादून के जौनसार ग्रुप के अतिरिक्त इस क्षेत्र में शेल, चूना, पत्थर तथा डोलेमाइट की मोटी परते पायी जाती हैं। जिन्हें क्राले ग्रुप भी कहा जाता है। इसमें ताल ग्रुप की चट्टानें निहित हैं। इसकी उत्पत्ति मेसोजोइक युग में माली जाती है। इसके ऊपरी भागों में कार्बोनेट चट्टानों की एक अन्य मोटी परत पायी जाती है जिसे पिथौरागढ़ का कालक क्षेत्र कहा जाता है। इनमें स्ट्रामोलाइट नामक जीवाशेष पाये जाते हैं। कुमाऊं हिमालय में नैनीताल क्रोलथ्रस्ट से उलर का संपूर्ण क्षेत्र है।

अल्मोड़ा दूधातोली थ्रस्ट द्वारा अलग हुआ है। यह क्षेत्र पूर्ण रूप से अल्मोड़ा दूधा तोली थ्रस्ट शीट खेदार कायान्तरित अवसादों का बना है। यहां की चट्टानों में पैलियोजिक तथा मैसोजोइक युगों की आकेन्यर्न युग में टेथिस सागर के अन्तर्गत स्थित पैलियोजोइक तथा मैसोजोइक युगों में आर्यक्रम की चट्टानों का अपरदन हुआ, जिसके कारण यहां पर लगातार निक्षेप होने से अवसादीकरण की क्रिया हुयी। अतः यहां पर काग्लोमरेट शैल तथा चूना पत्थर पाये जाते हैं।

मध्यवर्ती खेदार चट्टानों का क्षेत्र

लघु हिमालय के ठीक उत्तर का क्षेत्र मध्यवर्ती खेदार चट्टानों का क्षेत्र कहलाता है जो दक्षिण में मुख्य केन्द्रीय भ्रंश - बाह्य लघु हिमालय क्षेत्र से अलग हुआ है। अत्यधिक दुर्गम होने के कारण इस क्षेत्र का अध्ययन विस्तार से नहीं किया गया है। क्षेत्रीय दृष्टि से लघु हिमालय का कई तरह से अध्ययन नहीं किया गया है।

कुमांयु क्षेत्र में मध्यवर्ती खेदार चट्टानों का क्षेत्र है। इसमें पूर्णतया कायान्तरित चट्टानें उपस्थित हैं। इस क्षेत्र में पूर्व कैम्बेनियन और पैलीयोजोइक युग की कायान्तरित चट्टानें देखने को मिलती हैं, जिसमें स्थान-स्थान पर ज्वालामुखी उद्भेदनों के परिणामस्वरूप लवण का निक्षेप पाया जाता है। इस क्षेत्र की निचली परतों में अभ्रक के निक्षेप तथा सितग्रेनाइट के खनिज पाये जाते हैं।

मध्यवर्ती पर तों में कालिक सिलिकेट, संगमरमर की चट्टानें निहित हैं। इस क्षेत्र में क्वार्ट जाइटाशिष्ट की चट्टानें निहित हैं। यहां की चट्टानों में अत्यधिक सम्पीड़न के कारण कवलन देखने को मिलते हैं। इसे हिमालय के ग्रीषा का मूल क्षेत्र माना जाता है। यही क्षेत्र टेथीस अवसादों के जमाव का आधार रहा है।

टेथिस हिमालय क्षेत्रः

मध्यवर्ती चट्टानों के क्षेत्र के उत्तर में टेथिस हिमालय क्षेत्र है जिसे तिब्बत क्षेत्र कहा जाता है। इस क्षेत्र में सभी युगों के अवसाद निहित हैं। यहां की परतों की कुल मोटाई 6800 मी. से भी अधिक है। इस क्षेत्र में अवसादी चट्टानों की मुख्य विशेषताएं हैं कैम्बेनियन एवं आर्डीवीसीपन चट्टानें। लघु हिमालय में सैट्रोमेलाइट की अधिकता है परन्तु इस क्षेत्र में अनुपस्थिति देखने को मिलती है। कुमायुं क्षेत्र में इसकी मोटाई 900 मी. है। अत- इस क्षेत्र में झीलें अधिक देखने को मिलती हैं। टेथिस हिमालय के इन बेसिनों में कार्बोनीफेरस युग की चट्टानों का विकास कम मात्रा में हुआ। इसमें कश्मीर, लाहुल स्पिति, कुमायुं तथा नेपाल-भूटान बेसिनों का निर्माण हुआ।

जल संसाधनों का निर्माण

उत्तराखंड प्रदेश में जल संसाधन के मुख्य स्रोत वर्षा तथा हिमनादों का पिघलना एवं भूमिगत जल भण्डार स्रोत के रूप में निहित है। पूर्णतः हिमालय के इस क्षेत्र में मानसून जून से 15 सितम्बर ग्रीष्म ऋतु में तथा दिसम्बर से फरवरी शीत ऋतु में समुचित रूप से वर्षा द्वारा जल प्रदा होता है। समस्त जल भण्डार का 35 प्रतिशत भाग मानसून से प्राप्त होता है। शेष 40 प्रतिशत जल हिम के पिघलने तथा 25 प्रतिशत भूमिगत स्रोतों, सरोवरों तथा झीलों से प्राप्त होता है।

उत्तराखण्ड प्रदेश के भावर क्षेत्र में 20 सेमी. औसत वर्षा होती है परन्तु यह वर्षा समस्त क्षेत्र में पर्वतीय ऊंचाईयों के कारण विभिन्न मात्रा में होती है। उत्तराखण्ड में निहित श्रीनगर में 93 सेमी, देवप्रयाग में 73 सेमी. तथा नरेन्द्र नगर व चम्बा में 20 सेमी. वर्षा होती है। मंसूरी, नैनीताल, चम्बा, अल्मोड़ा, नई टिहरी तथा लैंसडाउन, चकरोता, धनौल्टी लघु हिमालय के क्षेत्र में अत्यधिक वर्षा होती है तथा शीत काल में बर्फ भी गिरती है। प्रायः उत्तराखण्ड में वर्षा 1200 मी. से 2200 मी. की ऊंचाई वाले क्षेत्रों में अधिक होती है।

धरातलीय जल संसाधन के स्त्रोत

उत्तराखण्ड प्रदेश में जल संसाधनों के सभी प्रकारों के धरातलीय स्त्रोतों की प्रचुरता से युक्त है। इस क्षेत्र में नदी, सरोवरों, झीलों से जल की प्राप्ति होती है। नदियां, सरोवरों एवं झीलों का जल मानसून के द्वारा तथा हिम से प्राप्त होता है जो हिमनदों के रूप में उपलब्ध हो जाता है जिसे कि निम्नसारिणी द्वारा दर्शाया गया है-

उत्तराखण्ड में धरातलीय जल भण्डार

क्रमांक	नदी घाटी	क्षेत्रफल , वग किमी.	क्षेत्रीय प्रतिशत	जल भंडार आयतन , घन मी.	क्षेत्रीय जल भंडार आयतन का प्रतिशत
अ-	हिमालयन-गंगा नदी क्रम	25705			
1-	भागीरथी	6620	12.8	2533	11.2
2-	अलकनन्दा	13320	26.0	5342	23.7
3-	नयार गंगा	4070	8.0	1626	7.2
4-	गंगा सुसवा क्रम	1695			
ब-	हिमालयन यमुना नदी क्रम	6564.30		1651	7.3
1-	यमुना	1760.47			
2-	टोंस	4359.83	10.6	4844	21.5
3-	आसन	744.0			
स-	हिमालयन-रामगंगा नदी क्रम	3510			
द-	काली नदी क्रम	8150	15.8	2387	10.5
ध-	कोसी नदी क्रम	4260	8.3	1870	8.3
	सरयू नदी क्रम	2730	5.3	1350	6.0
	हिमनद	3170	6.7	लागू नहीं	लागू नहीं
	पश्चिमी रामगंगा	3510	6.8	972	4.3
	योग	51130	100	22575	100

भागीरथी एवं अलकनन्दा जल प्रणाली क्रम एक पवित्र प्रयाग का नाम देवप्रयाग के नाम से विख्यात है जिसके पश्चात यह गंगा के नाम से प्रख्यात है। इसी गंगा नदी में व्यास घाट पर नयार नदी दुधा तोली से निकलकर अपना संगम बनाती है। नयार क्रम दो पूर्व एलं पश्चिम नयार से निर्मित है जो सतपुली में अपना संगम बनाकर नयार के नाम से जानी जाती है। व्यासी के पश्चात गंगा में ध्युनल नदी का उपक्रम समाहित हो जाता है, तत्पश्चात देहरादून जिले में सोंग-सुसवा उपक्रम गंगा में रायवाला के गंगा लहरी क्षेत्र में समाहित हो जाता है और हिमालयन गंगा हरिद्वार में अपना संपूर्ण जल मैदान में प्रवाहित करती है। संपूर्ण गंगा के जल प्रणाली का क्षेत्रफल 25705 वर्ग किमी. है जिसमें भागीरथी नदी 6620 वर्ग किमी. तथा अलकनन्दा घाटी 13330 वर्ग किमी. अक्षातित है, जिनमें क्रमश 2533 एम.क्यूब एवं 5533 एम.क्यूब जलक आयतन को सम्मिलित किए हुए है जो समस्त उत्तराखण्ड प्रदेश

के जल संग्रहण का क्रमशः 11.03 प्रतिशत एवं 24.09 प्रतिशत निहित है जो कुल का 35.48 प्रतिशत है।

हिमालयन-यमुना क्रम

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की

हिमालयन यमुना क्रम उत्तराखण्ड प्रदेश में प्रमुख टोंस नदी क्रम से अत्यधिक प्रभावित है। यमुना की प्रमुख सहायक नदी टोंस जो रूपन एवं सूपन नदियों से निर्मित होती हैं। इसके पश्चात टोंस में पवार नदी अपने जल को नैट वार में संभरित करती है। टोंस नदी हरीपुर-कालसी में यमुना में अपना संगम निर्मित करती है। तत्पश्चात यमुना में आसन नदी क्रम छालपुर में अपने समस्त जल भण्डार का सम्रण करती है। उक्त प्रकार से हिमालयन यमुना नदी क्रम कुल 6864.30 वर्ग किमी. के क्षेत्र को आक्षातित किये हुए हैं, जिसमें टोंस नदी क्रम 4359.83 वर्ग किमी. तथा ऊपरी यमुना क्रम वर्ग 1760.47 वर्ग किमी. एवं आसन नदी क्रम 744 वर्ग किमी. है, जिसमें संपूर्ण जल के आयतन का 28043 प्रतिशत जल समाहित है। अतः हिमालयन गंगा एवं यमुना नदी क्रम समस्त प्रदेश के कुल जल के आयतन 6389 प्रतिशत संभरित किये हुए हैं।

हिमालयन रामगंगा क्रम

रामगंगा क्रम समस्त प्रदेश के 6.45 प्रतिशत 6510 --- क्षेत्र को अक्षातित किये हुए हैं जिसमें जल का करीब 972 --- आयतन है, जो समस्त जल के आयतन का 4.2 प्रतिशत है।

हिमालयन काली गंगा क्रम

काली गंगा क्रम में गोरी गंगा एवं काली गंगा दोनों के उपगम सम्मिलित हैं, जो लगभग प्रदेश के 8150 किमी. क्षेत्र में निहित हैं तथा समस्त प्रदेश के आयतन का 10.40 प्रतिशत जल सम्भारित करती है।

हिमालयन कोसी गंगा क्रम

कोसी नदी क्रम कुल 4260 वर्ग किमी क्षेत्र में निहित है जो समस्त प्रदेश के 7.83 प्रतिशत क्षेत्रफल में सम्भारित है। समस्त जल के आयतन कसा 8.4 प्रतिशत जल को सम्भारित करती है।

हिमसालयन सरयू गंगा क्रम

सरयू नदी क्रम समस्त प्रदेश के कुल क्षेत्रफल 5511 प्रतिशत क्षेत्र 2730 वर्ग किमी को सम्मिलित किये हुए हैं तथा 870 --- जल का सम्भारित करता है जो प्रदेश का 5.8 प्रतिशत है। उपर्युक्त आंकडों से सिद्ध होता है कि प्रदेश में गढ़वाल हिमालयन 63.89 प्रतिशत तथा कुमायूं हिमालय 36.11 प्रतिशत कुल जल के आयतन को सम्भारित करते हैं।

हिमनद अक्षादि क्षेत्र

सम्पूर्ण प्रदेश का 6.7 प्रतिशत क्षेत्र बर्फ से अक्षादित है। प्रा 60 प्रतिशत हिमालय की नदियां इन्हीं क्षेत्रों से निकलती हैं, जिसमें 40 प्रतिशत नदियां स्रोतों से या हिमनदीय ताल एवं सरोवरों से निकलती है।

हिमनद ताल सरोवर तथा झीलें

उत्तरांचल प्रदेश में कुमायूं क्षेत्र क्योंकि इसका आंचल कठोर चट्टानों से निर्मित है अतः बरसात का पानी तालों तथा सरोवरों में एकत्रित हो जाता है, अतः इसे कूमचिल कहा जाता है। यहां पर झीलों की प्रचुरता है जैसे नैनीताल, नैकुचियाताल, खुर पाताल, मातीताल, वृह्द ताद इत्यादि। झीलें कूमचिल क्षेत्र में अधिक देखने को मिलती हैं। गढ़वाल हिमालयन में प्रायः ये ताल हिमनदों से अधिक निर्मित हैं, जैसे वैसुकी ताल, चौड़ाबाड़ी ताल। इसके अतिरिक्त भूस्खलन से निर्मित ताल भी हैं जैसे बिहारी ताल इत्यादि। उक्त सभी सरोवरों से प्रायः 12 प्रतिशत अक्षादित है।

भूमिगत जल भण्डार

उत्तर प्रदेश हिमालय में भूमिगत जल का भण्डार भी प्रचूर मात्रा में है क्योंकि पर्वतीय क्षेत्रों में स्थायी जल पटल अत्याधिक गहराई में है, जो स्थान विशेष के अनुसार 400 मीटर होने से उनका पूर्ण विवरण का सर्वेक्षण निरन्तर चला है, परन्तु अस्थायी जल पटल जो पर्चंड पटल के नाम से विख्यात है प्रायः 10 मीटर से 15 मीटर की गहराई में निहित है।

जिला देहरादून में यह जल पटल दून एम्वेफर के नाम से जाना जाता है। जो समुद्र तल से 10,000 से 13,000 फीट की ऊंचाई पर निहित है। यही जल पटल कुमायूं क्षेत्र में झील के जल के तल से निर्धारित किया जाता है। जल विज्ञान के अनुसार भूमिगत जल जो प्रयोग में आ सकता है उसकी कुल मात्रा करीब 64 मी. हैक्टैयर उपलब्ध है।

परन्तु इस भूमिगत जल को हमें संरक्षित भण्डार के रूप में रखना है। यदि इस भण्डार को समय से पहले उपयोग कर लिया गया तो हमारी मृदा एवं वायु में नमी की कमी

आने लगेगी और क्षेत्र में मरूस्थलीकरण की स्थिति उत्पन्न हो जायेगी। जैसा कि हिमाचल हिमालय में शिमला क्षेत्र के भूमिगत जल को अत्यधिक मात्रा में प्रयोग में लाने हेतु ट्यूबवैल का प्लान तैयार किया गया जो अत्यन्त असफल रहा। गंगा एवं सतलुज नदियों के बेसिनों में निर्मित ट्यूबवैल से उनका जल का तल 10 फीट नीचे चला गया और समस्त गांवों में यह जलस्तर भी नीचे जा रहा है। अतः भूमिगत जल पीने के लिए तो भरपूर है लेकिन सिंचाई के लिए यदि प्रयोग किया गया तो इस भण्डार को हम अगले दशक में समाप्त कर देंगे, जिसके परिणामस्वरूप हमारी मृदा में शुष्कता तथा मरूस्थलीयकरण की स्थिति पर्वतों में नजर आने लगेगी।

भूमिगत जल के स्रोत भी हमारी नदियां तथा वर्ष का जल है। देहरादून घाटी में किये गये परिक्षणों से ऐसा ज्ञात होता है कि कुल औसत वर्षा 231.4 -- का 116.4 -- जल वाष्पीकरण के माध्य से वायुमण्डल में चला जाता है और शेष 5 --- का 60 प्रतिशत मृदा शोषण के माध्यम से 665 -- भूमिगत हो जाता है। अतः अवशेष जल 40 प्रतिशत अर्थात 38.5 सेमीं जल प्रतिशत नदी के बाह्य रूप से संचरित रहता है। भूमिगत जल-भण्डार में चूने के क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में जल ऐम्बेफरस के रूप में छोटी-छोटी चूने की गुफाओं तथा नलिकाओं में समारित रहता है जो न केवल यहां को नमी प्रदान करते हैं बल्कि वायुमण्डल और जैवकीय मण्डल के लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होते हैं। जिला देहरादून में मंसूरी की क्रोल पर्वतीय श्रेणी जो पूर्ण रूप से चूने के पत्थर से निर्मित है इसमें 60 प्रतिशत क्षेत्र अन्तर्निहित जल स्रोतों से युक्त है। इसमें मंसूरी, ओकगांव, हाथीपांव, महाफाल एवं कैम्पटीफाल तथा सहस्त्रधारा एवं टपकेश्वर तथा गुच्चुपानी, बीजपुर भूमि जल स्रोतों से युक्त है। इसके अतिरिक्त आसारोरी मंसूरी जल विभाजक जो आसन घाटी और सौंग सुसवा घाटी से पृथक करती है तथा ये जल विभाजक सड़क से ओकगांव तक निहित है। उक्त जल विभाजक पूर्ण रूप से भूमिगत जल स्रोतों से ओतप्रोत है। उदाहरणार्थ जो गांव इन स्रोतों पर स्थित हैं, उनके नाम स्वतः पानी शब्द द्वारा ज्ञात हैं, जैसे गुच्चुपानी, झड़ीपानी, नालापानी, चोर पानी, भूपाल पानी, उंगलवाला इत्यादि समस्त गांव जल स्रोतों पर स्थित हैं। इस प्रदान समस्त उत्तरांचल प्रदेश में निहित नदियों के जल विभाजक उदाहरणार्थ टोंस यमुना, यमुना-भागीरथी, भागीरथी-अलकनन्दा जल विभाजक तथा काली-रामगंगा जल विभाजकों में कुल भूमिगत जल का 60 प्रतिशत भण्डार निहित है। परन्तु अतिरिक्त चूने का उत्खनन अतिरेक चरान तथा अतिरेक कटान से समस्त भूमिगत जल स्रोत विनाश के कगार पर खड़े हैं। 40 प्रतिशत करीब स्रोत खराब हो चुके हैं और 25 प्रतिशत जल स्रोत सूखे होने की स्थिति में हैं। अतः भूमिगत जल को संरक्षण प्रदान करने हेतु इन समस्त जल स्रोतों एवं इनकी जल अवनलिकाओं को सुरक्षित रखना अत्यन्त आवश्यक है। जिसके लिए अतिरेक उत्खनन, अतिरेक कटान आदि कार्य नियंत्रित करना आवश्यक है।

उत्तरांचल प्रदेश में फसलों के उत्पादन में सिंचाई भाग में जल की आपूर्ति का बजट

फसलें	क्षेत्रफल	सिंचित क्षेत्रफल	जल का आयतन सिंचाई हेतु	जल की आवश्यकता	जल का नुकसान	कुल आवश्यक जल
धान	266664	130699	0.05	26130.0	69198.3	1950.3
मक्का	41972	976	0.088	439.2	241.6	680.8
गन्ना	45836	26011	0.225	48770.6	29262.4	78033.8
गेहूं	383783	150263	0.150	87903.8	43951.5	131885.8
ज्वार	36701	882	0.375	123.3	66.1	198.4
तिलहन	11203	4823	0.195	1254.0	627.0	1881.0
आलू	5914	1138	0.350	3278.1	1639.0	4917.1
सब्जियां	13282	11954	0.225	10758.6	5379.3	16137.9
चना	2085	344	0.100	68.83	34.4	103.2
अन्य	343967	4448	0.050	222.4	111.2	333.6
कुल	1151407	331688				429153.8

स्वतंत्रता के पश्चात उत्तर प्रदेश हिमालय में सिंचाई के साधनों में पर्याप्त मात्रा में वृद्धि हुई, जिसमें से कुछ योजनाएं निम्नवत हैं जैसे शारदा सागर, नामक सागर 1956-57 लुनरिया 1955-56, बीरपुर 1963-64, धौंस 1973-74, रामगंगा अफजलगढ़ 1985-86 तथा टिहरी बांध प्रोजेक्ट इत्यादि निहित हैं।

प्रतिवर्ष इसि क्षेत्र से 8.75 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र प्रवाहित हो जाता है जिससे हैक्टेयर क्षेत्र को सिंचित कर सकते हैं।

स्थान	अक्षांश	देशान्तर	ऊंचाई	जल	वाष्पीकरण	आधिक्य
मंसूरी	30 27	78 5	2042	72 सेमी	266.1	166.1
देहरादून	31 19	78 2	682	116.4	231.4	123
हरिद्वार	28 51	77 58	272	134.4	116.3	10.2

देहरादून घाटकी कुल वर्षा 221.4 सेमी प्रतिवर्ष में से 116.4 सेमी जल वाष्पीकरण प्रक्रिया द्वारा समाप्त हो जाता है। शेष 115 सेमी वर्षा का जल नदियों के प्रवाह में जिसमें -- सेमीं भूमिगत हो जाता है और शेष 68.5 सेमी बाह्य जल में निहित हो जाता है। कृषि के लिए कितना जल, सिंचाई के लिए कितना जल आवश्यक है यह केवल इस बात पर निर्भर करता है कि कौन सी फसलों को उगाया जा रहा है। परन्तु गेहूं की फसल का स्तर लेकर जो प्रयास किया गया है वह इस प्रकार है-

जो जल प्रतिवर्ष उपयोग में आ रहा है वह इस प्रकार है-

कुल अतिरिक्त जल जो सिंचाई हेतु चाहिए

कुल वर्षा का जल एक निश्चित स्तलीय वाह के लिए

उपयुक्त आंकडें जिनका उपयोग किया जा सकता है परन्तु पर्वतीय क्षेत्र ढाल तीव्र होने के कारण तथा मृदा बर्फीली होने से जल भी संग्रहित करने के लिए विशेष प्रकार की तकनीकों को अपनाया गया है।

निदान

1. वर्षा के जल को उन क्षेत्रों में संग्रहित किया जा सकता है जहां पर जलस्रोत पाये जाते हैं या उन निम्न भूमियों पर जहां पर मृदा सघन व वनस्पति घासों से मुक्त हो या जहां पर अवशिष्ट तालाब व झीलें हों जैसे रानी पोखरी, पाखरा, भूपाल पानी, झड़ीपानी, चन्द्र बनी, कड़वा पानी, नालापानी, उगालवाला ग्राम जहां पर सदावाही जल निहित है। उक्त सभी स्रोतों में चन्द्र बनी का स्रोत संग्रह सर्वोपरि है। यहां पर 51 जल स्रोत वर्ष भर प्रवाहित होते हैं।

2. पर्वतीय क्षेत्र में जल के वितरण के लिए पर्वतीय प्रवणता का लाभ लेना एक वैज्ञानिक नियोजन होगा। देहरादून नगर में सन् 1968 में पानी का वितरण इस कैनाल के द्वारा रिस्पना नदी का पानी दिलाराम बाजार में संग्रहित करके विद्युत माध्यम से पानी का नगर के द्वितीय एवं तृतीय मंजिल पर चढ़ाने के लिए प्रतिवर्ष --- लाख रूपये की धनराशि को व्यय करना पड़ता था।

   समस्त जल स्रोतों को अध्ययन करके जल संस्थान देहरादून को एक योजना का प्रोजेक्ट बनाकर जल संस्थान के अधिकारियों को प्रस्तुत किया गया। इसके अन्तर्गत एक जल संग्रहण वितरण के निर्माण राजपुर से शहनशाही आश्रम के --- फीट की ऊंचाइ प्रस्तावित की जो करीब 1980 में स्वीकार हो गई थी। तत्पश्चात अब शहनशाही रिजर्वायर से सीधे प्रवणता के माध्यम से देहरादून नगर जो 2200 फीट पर स्थित है फीट अधिक ऊंचाई स्थित मकानों को पानी बिना विद्युत के पहुंचाया जा रहा है। इस योजना को जो गुरूत्व शक्ति का एक मॉडल है उपयोग में लाना चाहिए।

3. कृषि भूमि को सिंचित करने के लिए तकनीकी को पर्वतीय क्षेत्र में अपनाने के लिए नियोजन बनाना अत्यन्त ही लाभदायक होगा। पर्वतीय क्षेत्र में --- को प्रस्तावित किया जाये।

4. मकानों के निर्माण के लिए जल संग्रहण तकनीकी का उपयोग-

मकानों की छतों का बरसाती जल पाईप लाईन के द्वारा धरातलीय सतह पर टैंक के माध्यम से संग्रहित करके उसका उपयोग किया जा सकता है। मेघालय में कुल मकानों की छत पर पानी को संरक्षित हेतु बनाये गये टैंक का मूल्य 189/- है, जिसमें 10 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन की दर से तीन महीने के लिए प्रति घर के लिए प्रर्याप्त है।

भूमिगत जल संरक्षण

भूमिगत जल प्रकृति ने एक धरोहर के रूप में आपातकालीन के अवसर पर उपयोग करने के लिए दिया है। अतः इसे संभालकर जिसके लिए निम्न बातों पर ध्यान देना है-

क जल का कृत्रिम पुनः निर्माणः भारत में गुजरात, महाराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश, मध्यप्रदेश, तमिलनाडू एवं केरला में जब बावडी तथा कुंओं इत्यादि का जल तट घट जाता है तभी कृत्रिम क्रियाओं से जल का तल सामान्य स्थिति में ले आते हैं। इसमें भूखण्ड़ों, मृदा तथा जल की उपलब्धता को देखकर किया जाता है। अतिरिक्त जल को मृदा पर छोड़कर उसे सरन्ध्रों के माध्यम से भूमिगत किया जाता है। इसका कुल व्यय 5 रूपये प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष पड़ता है, जो सामूहिक रूप से करने पर पड़ता है।

ख भूमिगत टैंकः हिमाचल प्रदेश में यह कदम बड़ी तीव्रता से उठाया गया है। वहां प्रत्येक जल स्रोत के पानी के बहाव पर नियंत्रण करके उससे एक सीमेन्ट का टैंक बनाकर संग्रहित किया गया है तथा नीचे सीढ़ीयां देकर उसे अधिक संरक्षित किया है, तत्पश्चात उसके पानी को एक बाहरी टैंक एकत्रित करके उसे जानवरों के पीने के लिए संरक्षित किया गया है। एक टैंक संपूर्ण गांव को पीने का पानी प्रदान करता है। इस बावडी के बनाने के व्यय करीब 8000 रूपये है। इसे हरा-भरा रखने के लिए तुलसी, केला, आंवला आदि के वृक्ष लगाये जाते हैं।

उत्तरांचल प्रदेश में 75 प्रतिशत जल स्रोतों की स्थिति जीर्ण-शीर्ण है। उनका पुनगर्ठन करके समुचित रखरखाव बावडी या नाला के रूप में करना चाहिए। महाराष्ट्र में 1978 में प्रतिवादित किया कि इस प्रकार के कार्य महाराष्ट्र में किया गया। वहां --- का टैंक बनाया गया, जिसे जल प्रवेश्य टैंक के नाम से विदित किया गया जिसमें 2.5 मीटर औसतन भूमिगत जल का तल बढ़ गया। पर्वतीय क्षेत्र में हिमशिलाओं के घिरे क्षेत्रों के मध्य गर्त के रूप में जल को संग्रहित करके हम भूमिगत जल की प्रवेश्य स्थिति को बढ़ा सकते हैं।

शोध कार्य को दृष्टिगत करते हुए चीला के समीप बिन्दासिनी व ताल नदी के संगम के समीप गांव में जल प्रवेश्य टैंकों का निर्माण करके जल स्रोतों को पुनजीर्वित कर सकते हैं।

लघु धरातलीय बांध

पर्वतीय क्षेत्रों में नदियों के जल को नदी पार्वक अधखुले क्षेत्र में लघु बांध बनाकर पीने को कृत्रिम प्रवेश्य विधि से भूमिगत जल भण्डार में वृद्धि कर सकते हैं। इस बांध को मिट्टी, पत्थर तथा कंक्रीट से निर्मित करके समस्त क्षेत्र साधन योग्य भूमिगत सेम्चुरित का निर्माण कर सकते हैं, जिनके माध्यम से हम बरसाती नदियों के पानी यथा स्थान पर संग्रहण कर स्थान विशेष की आवश्यकता की पूर्ति कर सकते हैं। बांध से पानी दूसरे स्थान को लघु के द्वारा भेजा जा सकता है। इस प्रकार के बांध जहां नदीं घुमाव बनाती है या किसी पर्वत के साथ मोड़ लेती है वह स्थान अति उत्तम सिद्ध हुए हैं।

जलाशयों से वाष्पीकरण पर नियंत्रण

पृथ्वी के सतह पर पाये जाने वाले समस्त जल संसाधनों से वाष्पीकरण के माध्यम से जल की मात्रा कम होती जाती है। उसे किसी सीमा तक बचाया जा सकता है।

1. जलाशयों को वृक्षों, घासों तथा झाड़ियों से सभी दिशाओं से आक्षादित करें।
2. जलाशय पर्वतीय क्षेत्रों के उच्च संस्थानों पर निर्मित करें।
3. मानो मोलीकुलर फिल्म के उपयोग से।
4. जलाशयों को विन्ड ब्रेकर से सम्भालकर रखे।

जल की उपयोग की आवश्यकता में न्यूनता करने से

चूंकि संसाधन सीमित हैं और जनसंख्या तीव्रता से बढ़ रही है, अतः हमें संसाधनों का उपयोग चाहे वह जल से या वृक्ष का उपयोग बड़े ढंग से करना। नालों में पानी के बहाव को नियमित करना तथा पौधों में हम घरों की रसोई, घर का पानी उपयोग में लायें। जलाशयों एवं बावडियों को किसी टीन या लकड़ी के तख्तों से ढक कर रखें जिससे जल वाष्पीकरण से बचाया जा सकता है।

कृषि पद्धति में जल के अभाव की मात्रा से समायोजन

पर्वतीय क्षेत्रों के कृषकों को इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिए कि उन फसलों को जिन्हें कम पानी की आवश्यकता है उन्हें एक साथ तथा एक जैसी भूमि में उगायें जैसे ज्वार, बाजरा, तिलहन। इनकी कृषि कम जल वाले क्षेत्र में की जानी चाहिए।

सिंचाई के साधनों में सुधार

चीन में कृषि को एक बागवानी का रूप दिया गया है। तीन प्रकार की फसलों मको एक साथ एक ही खेत में बोकर उसके चारों तरफ ईंधन, चारापत्ती एवं फलों के वृक्षों से उसका परिसीमन करते हैं। ये लोग खेत की डोल को मिट्टी तथा पत्थरों से नहीं बनाते हैं और डोल क्षेत्र का पूर्ण उपयोग करते हैं।

इसके पश्चात खेत के किसी क्षेत्र में एक ढलाव भूमि पर तालाब बना रहता है, वहां पर बरसात का जल एकत्रित किया जाता है और सामूहिक रूप से सभी लोग सिंचाई करते हैं। तालाब से पानी को मशीन द्वारा उपर उठाकर पाईप द्वारा खेतों में भेजा जाता है। वहां पर खेतों के सिंचाई पाईप जल के माध्यम से सिंचाई की जाती है। इस जल में कीटनाशक दवायें भी घोली जाती हैं और पाईप में छिद्रों के माध्यम से जल उपर तक पसलों में पाये जाने वाले कीड़ों को मार देता है। इस प्रकार जल सदुपयोग तथा जलमूल द्वारा बनाकर भेजने में जो वाष्पीकरण के माध्यम से व्यर्थ में पानी का दुरूपयोग होता है वह बच जाता है।

हमारे देश में सिंचाई के लिए खुली कूलों से पानी के वाष्पीकरण तथा अन्तर्निहित प्रवेश्य के माध्यम से 40 प्रतिशत जल व्यर्थ में चला जाता है तथा 10 प्रतिशत लोग कैनाल तोड़ देते हैं जो व्यर्थ में प्रवाहित हो जाता है। अतः पाईप जल के माध्यम से सिंचाई की व्यवस्था अधिक हितकर तथा समुचित है, जो पर्वतीय क्षेत्रऋ के लिए अत्यधिक कल्याणकारी है।

फसलों का हेर फेर तथा समायोजन

जलापूर्ति के अनुसार

यदि किसी क्षेत्र में जल का अभाव है तथा भूमिगत जल भी न्यून मात्रा में है उस दशा में किसान को उन फसलों का चयन करना चाहिए जो कम पानी में पनप सके। प्रायः देखा जाता है कि दक्षिणवर्ती ढाल एवं पूर्ववर्ती ढालों पर जो सूर्य ताप अधिक होने पर वायु तथा मृदा की नमी से अभाव आ जाता है ऐसे स्थानों में खाद्यानों की फसलों में एवं दलहनों में चुनाव करना आवश्यक है तथा उत्तर वर्तीय एवं पश्चिमवर्ती ढालों पर जहां पर वायु एवं मृदा में नमी अधिक रहती है वहां पर बागवानी, फलदार पेड़, वन तथा हरे-भरे पेड़ लगाये जा सकते हैं।

उत्तरांचल प्रदेश में उत्तर एवं उत्तर-पश्चिमी ढालों पर सीढीदार खेतों में खाद्यान तथा उत्तर एवं उत्तर पश्चिमी ढालों पर फलदार वृक्षों की खेती की जा सकती है तथा जंगल भी लगाये जा सकते हैं।

जल का पुर्नोपयोग

जल को समुचित रूप से शुद्ध करने के पश्चात जो जल शेष बचता है उसका उपयोग पाकशाला वाटिका में उपयोग किया जाना चाहिए तथा शहरों में साग-सब्जियों के लिए शिवर वाटर उपयोग किया जाना चाहिए। पर्वतीय क्षेत्रों में ढाल के कारण तथा बर्फीली मृदा होने के कारण शिविर का पानी मृदा में शोषित हो जाता है जिसमें हम कृषि की सिंचाई में उपयोग कर सकते हैं।

अन्य सुझाव

गृहों में पानी की उपयोग पर अधिक ध्यान देना चाहिए। नालों एवं पाईपों में पानी व्यर्थ में नहीं खुला रहना चाहिए। नहाने, बर्तन धोने तथा वस्त्रों को साफ करने के लिए पानी समुचित रूप से उपयोग करना चाहिए।

****